[Conference-Composition of Colours :December,2014] ISSN- 2350-0530
DOI: https://doi.org/10.29121/granthaalayah.v2.i3SE.2014.3573

INTERNATIONAL JOURNAL of RESEARCH –GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository
Art

मधुबनी लोक चित्रकला की विशेषताएँ एवं रंगों की अद्भुत संयोजन

लाल बहादुर कुमार
शोध छात्र,
चित्रकला विभाग, दृश्य कला संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

मिथिलांचल की मधुबनी लोक चित्रकला के माध्यम से लोकचित्र परम्परा का निर्वाह आज भी किया जा रहा है। यहाँ की लोक कला शैली वंश परम्परा के आधार पर आज भी गतिशील है। मधुबनी लोक चित्रकला की विदेशों में काफी मांग है लेकिन वह अपने ही देश में उपेक्षित है। दुर्भाग्य की बात है कि जिनके हाथ में हुनर है, वे ग्रामीण कलाकार आमतौर पर गरीब हैं। देश के कला–जगत् की नजर इस पर नहीं गई, जबकि ''जापान के हासेभावा ने राजधानी टोकियो से उत्तर–पश्चिम में स्थित निगाता में एक पहाड़ी पर मिथिला म्यूजियम की स्थापना की है। जापान के कला के मर्मज्ञ एवं कला पारखी ''हासेगावा'' पच्चीस से अधिक बार भारत आ चुके हैं। वे मधुबनी लोक चित्रकला के कई सुप्रसिद्ध कलाकारों के आवास पर भी गए और मिथिला के कलाकारों से मधुबनी लोक चित्रकला के माध्यम व तकनीक एवं रंगों के संयोजन पर चर्चा की और उनको समझने के बाद मिथिला कलाकारों को अपने साथ जापान ले जाकर चित्र रचना भी कराई। इसके अलावा अमेरिका, इंग्लैण्ड, दक्षिण अफ्रीका, फ्रांस, जर्मनी, मॉरीशस जाकर कई कलाकारों ने इस लोक कला शैली से लोगों को अवगत कराया और देश का मान बढ़ाया है।

मिथिला लोक चित्रशैली के कई कलाकारों को *''पद्मश्री''* मिल चुकी है, जैसे– *'जगदम्बा देवी', 'सीता देवी', 'गंगा देवी', 'महासुन्दरी देवी'* ऐसे ही कलाकार है, जो इस लोक कला को शिखर पर ले गए। इसके अलावा *'सत्यनारायण लाल कर्ण', 'कमल नारायण', 'कर्पूरी देवी', 'गोदावरी दत्त'* और *'मोती कर्ण'* जैसे प्रसिद्ध कलाकार भी इस लोक कला के प्रति समर्पित हैं। सम्मानित मधुबनी कलाकार राजकुमार इस कला के संदर्भ में दो बार मॉरीशस जा चुके हैं। उनके अनुसार – ''मिथिला लोक चित्रकला की बहुत पुरानी विधा है मधुबनी लोक चित्रकला। यह भूकंप और अकाल की पीड़ा से उपजी हैं। घरों के ध्वस्त हो जाने की व्यथा को दीवार पर उकेरने की कोशिश हुई और बाढ़ में यह लोक कला दीवार से कागज पर उतारी जाने लगी।'' यह भी सच है कि मिथिला क्षेत्र की पहचान इस लोक कला की वजह से देश–विदेश में बनी और इसके जरिये ग्रामीण महिलाओं और कम पढ़े–लिखे लोगों को आज अपने देश में ही नहीं बल्कि विदेशों में भी माध्यम से इस मिथिला लोक कला से इस कला जगत् में एक अपनी पहचान मिली है।

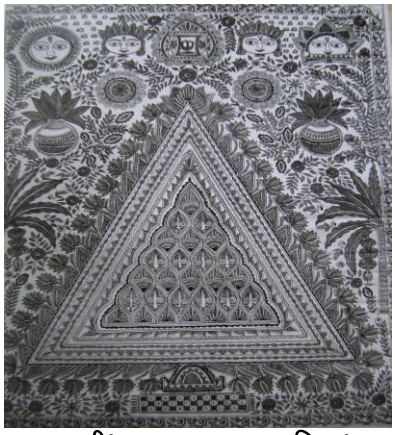

कचनी' द्वारा भतराइस अरिपन'

मधुबनी लोक चित्रकला की समृद्ध परम्परा की एक अपनी विशेषता एवं प्रसिद्धि है। यह लोक कला इन क्षेत्रों की संस्कृति में गहरे से धंसी हुई हैं, लेकिन आधुनिक होते समय में नई पीढ़ी की उपेक्षा के कारण अपनी समद्धि और बदहाली दोनों की ही कथा कहती है। यह मूल रूप से दीवारों पर बनाई जाती है, लेकिन लोकप्रियता एवं प्रसिद्धि के कारण अन्य जगह भी इसका उपयोग होने लगा है और बनने लगा है। इसके लिए प्रसिद्ध औद्योगिक घरानों और सरकार (संस्कृति विभाग, मंत्रालय) का सहयोग लिया जाए ताकि इससे युवा कलाकारों को लोककला की शिक्षा देकर उसे आगे बढ़ाने के लिए प्रोत्साहित किया जा सके। इस संदर्भ में भोपाल संग्रहालय अपने क्षेत्रीय लोक संग्रह के लिये विख्यात है।

INTERNATIONAL JOURNAL of RESEARCH –GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository
Art

मधुबनी लोक चित्रकला की तकनीकी व रंग–संयोजन– लोक शैली के चित्रों का विषय धार्मिक और लोक जीवन की कथाओं से जुड़ा हुआ है। लौकिक कथाओं, राम–कृष्ण, काली, महादेव आदि देवी–देवताओं से जुड़े कथानक इस लोककला के विषयग रहे हैं। रंग–संयोजन का चयन अप्राकृतिक है, फिर भी लोकचित्रों में आकर्षण है। इस लोक चित्रकला का चित्रण कपड़ों पर हाशिया के रूप में बढ़ रहा है। आरम्भ में लोक साहित्य के पोथी चित्र बने, जिनमें *'चण्डीदास'* व *'विद्यापति'* की पुस्तकें प्रमुख हैं। आगे चलकर बुद्ध, जन्म, गणेश जननी, ताजमहल, शाहजहाँ की मृत्यु आदि शीर्षक से चित्र बनाये गये।

मधुबनी लोक चित्रकला में चटख प्राकृतिक रंगों और बारीक *''कचनी''* रेखाओं का प्रयोग होता है। इनके जरिये *''रामायण''* और *''महाभारत''* की कथाओं के दृश्यों का अंकन किया जाता है। मधुबनी लोककला की जड़ें मिथिलांचल की भावनाओं में गहरी जमी हुई हैं। यहाँ विवाह के अवसर पर नवदंपति के लिए *''कोहबर''* की प्रथा बहुत पुरानी है। इसमें घर की दीवार पर गोबर और आलता (शुभ लाल रंग) से चित्र बनाए जाते हैं। पर्व–त्यौहारों, पूजा, विवाह, उपनयन आदि संस्कारों में भी कोहबर का प्रचलन है। कोहबर चित्रों में सात ग्रहों को सात पत्तों के रूप में अंकित किया जाता है। इस लोक चित्रकला में बांस एवं केले के पेड़ वंशवृद्धि के सूचक हैं। इसी प्रकार कछुआ और मछली सुहाग के, हाथी–घोड़ा ऐश्वर्य के, सूर्य–चंद्रमा दीर्घ जीवन के, हंस तथा मोर शांतिपूर्ण जीवन के प्रतीक के रूप में अंकित किए जाते हैं। इसके साथ ही अग्नि का चित्रण विवाह के सात फेरे के साक्षी के रूप में किया जाता है। इस लोक चित्रकला शैली में व्यक्ति चित्र, जन जीवन चित्र तथा प्राकृतिक चित्र भी बनने लगे हैं। इस शैली के चित्रों में *''भरनी''* सुनियोजित रंगों की अद्भुत संयोजन मधुबनी लोककला की विशिष्ट पहचान रही है।

सारांशतः– भारत समेत विश्व के अनेक देशों में जिस लोक चित्रकला को मिथिला ही नहीं, पूरे बिहार का गौरव कहकर कला जगत् में सम्मानित किया जाता है, उसका प्रादुर्भाव लोक–परम्परा से हुआ है। सन् 1966–67 तक इसका प्रयोग न तो व्यावसायिक था न ही असामयिक। इसका अंकन मात्र पर्व–त्यौहारों और सांस्कारिक अवसरों पर किया जाता था। उन दिनों मिथिला प्राकृतिक आपदा की दोहरी मार से त्रस्त रहती थी; कभी बाढ़ तो कभी सुखाड़ इसकी नियति बन गयी थी। ऐसी ही प्राकृतिक आपदाओं से जुड़े राहत कार्यक्रमों के दौरान, मधुबनी से सटे गाँव पर कला–विशेषज्ञों की दृष्टि मिट्टी की दीवार पर बने भित्तिचित्रों पर गई। विशेषज्ञों ने उन चित्रों में सृजनशीलता का अपार स्रोत देखा और भारत सरकार को समझाया कि मधुबनी की अव्यावसायिक ग्रामीण महिलाओं के चित्र–कौशल को व्यावसायिक रूप देकर उनकी दशा सुधारी जा सकती है। इसके लिए जितवारपुर और रॉटी की ग्रामीण महिलाओं को इस बात के लिए प्रेरित करने का प्रयास शुरू हुआ कि भित्ति पर बनने वाले चित्रों का अंकन कागज पर करें लेकिन महिलाएँ इसके तैयार नहीं थीं। उनका विश्वास था कि आर्थिक लाभ के लिए ''भगवान से जुड़े'' पौराणिक प्रसंगों का अंकन कागज पर करना पाप है, अधार्मिक कृत्य है। बहुत कठिनाई से वे इस बात पर राजी हुईं कि उनके द्वारा बनाए गये चित्र मंदिरों में लगाए जाएँगे जिससे धार्मिक भावना और दूर तक इस कला शैली के स्वरूप को बढ़ाया जायेगा। मिथिला की ग्रामीण महिलाओं को प्रेरित करने और इस लोक कला को व्यावसायिक ढाँचे में रखने के उस कठिन दौर में सबसे अधिक योगदान कला–विदुषी और लेखिका *'पुपुल जयकर'*, शिल्प गुरु *'उपेन्द्र महारथी'* और *'भास्कर कुलकर्णी'* का नाम अग्रगण्य है। आखिर घर–आँगन और मिथिला के संस्कारों में पली–बढ़ी लोक चित्रकला अपने चटक रंगों को परिधान में जब बाहर निकली तो कला जगत् जैसे मन्त्र ध्वनित हो गया।

भारत सरकार ने सन् 1970 में मिथिला चित्रकला को *''लोकचित्र''* की मान्यता प्रदान की। कला–विशेषज्ञों ने कहा कि मिथिला लोक चित्रकला की ग्रामीण स्त्रियों के ये चित्र *''पिकासो''* के चित्रों से अधिक जीवन्त हैं। दुर्भाग्य की बात यह है कि वर्तमान समय में लोककला के क्षेत्र में रसायनिक रंगों के प्रयोग से लोककला के वास्तविक सौन्दर्य पर गहरा प्रभाव पड़ा है। लोककला के वास्तविक सौन्दर्य को बनाये रखने के लिए प्राकृतिक रंगों का प्रयोग नितान्त आवश्यक है, जिससे इस लोककला का जीर्णोद्धार हो सके।

संदर्भ :

1. *वर्मा, (डॉ0) प्रमिला, ''वस्त्र विज्ञान एवं परिधान'', पटना, बिहार, प्रकाशन, बिहार, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, इक्कीसवाँ संस्करण, वर्ष 2009*
2. *दैनिक जागरण, ''झंकार जिंदगी की'', 8 सितम्बर, वर्ष 2013*
3. *पाण्डे, मनोहर, ''सामान्य अध्ययन'', प्रकाशक, अरिहन्त पब्लिकेशन्स (इण्डिया) लिमिटेड, मेरठ*
4- *कश्यप, कृष्ण कुमार, ''मिथिला चित्रकला'', प्रधान संपा0, चंचल कुमार, प्रकाशक, सांस्कृतिक कार्य निदेशालय, कला, संस्कृति एवं युवा विभाग, बिहार, वर्ष 2013*